शिवमहिम्न स्तोत्र

गंधर्वराज पुष्पदंतरचित.....

इस स्तोत्र के निर्माण पर एक अत्यंत ही रोचक कथा प्रचलित है। एक समय की बात है जब चित्ररथ नामक शिवभक्त राजा हुए जिन्होंने अपने राज्य में कई प्रकार के पुष्पों का एक उद्यान बनवाया, वह शिवपूजन के लिये पुष्प वहीं से ले जाते थे। महान् शिवभक्त गंधर्व पुष्पदंत देवराज इंद्र की सभा के मुख्य गायक थे, एक दिन उनकी नजर उस सुंदर उद्यान पर पड़ी और वह मंत्रमुग्ध हो गए, उन्होंने उसी उद्यान से पुष्प तोड़े तथा प्रस्थान किया। मायावी गंधर्व पर किसी की नजर नहीं पड़ी पर जब राजा को इसका पता चला तो उसने चोर को पकड़ने के कई असफल प्रयास किए। राजा को एक तरकीब सूझी उसने शिव पर अर्पित पुष्प आदि उद्यान के पथ पर बिछा दिया। अगले दिन जब पुष्पदंत वहाँ आए तो उनकी नजर उन शिव निर्माल्य वस्तुओं पर नहीं पड़ी जिससे उनके पद ही उनपर पड़ गए। गंधर्वराज को शिव के क्रोध का भाजन करना पड़ा तथा उनकी सारी शक्तियाँ समाप्त हो गई।जब उनको अपनी भूल का आभास हुआ तब उन्होंने एक शिवलिंग का निर्माण कर उसकी पूजा की तथा प्रार्थना के लिये कुछ छंद बोले, शिव प्रसन्न हुए, उनकी शक्तियाँ लौटा दी तथा यह आशीर्वाद दिया कि उनके द्वारा उच्चारित छंद समूह भविष्य में

शिवमहिम्नस्तोत्र के नाम से प्रचलित होगा तथा उनके हृदय में स्थान प्राप्त करेगा और पुष्पदंत द्वारा बनाया गया शिवलिंग पुष्पदंतेश्वर महादेव के नाम से प्रसिद्ध होगा जिसके दर्शन मात्र से पाप कटेगा।

इस प्रकार शिवमहिम्न स्तोत्र की रचना हुई।

शिवमहिम्न स्तोत्र में 43 श्लोक हैं, श्लोक तथा उनके भावार्थ निम्नांकित हैं --

पुष्पदन्त उवाच -

महिम्नः पारं ते परमविदुषो यद्यसदृशी।

स्तुतिर्ब्रह्मादीनामपि तदवसन्नास्त्वयि गिरः॥

अथाऽवाच्यः सर्वः स्वमतिपरिणामावधि गृणन्।

ममाप्येष स्तोत्रे हर निरपवादः परिकरः॥ १॥

भावार्थ: पुष्पदंत कहते हैं कि हे प्रभु ! बड़े बड़े विद्वान और योगीजन आपके महिमा को नहीं जान पाये तो मैं तो एक साधारण बालक हूँ, मेरी क्या गिनती? लेकिन क्या आपके महिमा को पूर्णतया जाने बिना आपकी स्तुति नहीं हो सकती? मैं ये नहीं मानता क्योंकि अगर ये सच है तो फिर ब्रह्मा की स्तुति भी व्यर्थ कहलाएगी। मैं तो ये मानता हूँ कि सबको

अपनी मति अनुसार स्तुति करने का अधिकार है। इसलिए हे भोलेनाथ! आप कृपया मेरे हृदय के भाव को देखें और मेरी स्तुति का स्वीकार करें।

अतीतः पंथानं तव च महिमा वाङ्मनसयोः।

अतद्व्यावृत्त्यायं चकितमभिधत्ते श्रुतिरपि॥

स कस्य स्तोतव्यः कतिविधगुणः कस्य विषयः।

पदे त्ववर्वाचीने पतति न मनः कस्य न वचः॥ २॥

भावार्थ: आपकी व्याख्या न तो मन, न ही वचन द्वारा संभव है। आपके सन्दर्भ में वेद भी अचंभित हैं तथा 'नेति नेति' का प्रयोग करते हैं अर्थात ये भी नहीं और वो भी नहीं। आपकी महिमा और आपके स्वरूप को पूर्णतया जान पाना असंभव है, लेकिन जब आप साकार रूप में प्रकट होते हो तो आपके भक्त आपके स्वरूप का वर्णन करते नहीं थकते। ये आपके प्रति उनके प्यार और पूज्यभाव का परिणाम है।

मधुस्फीता वाचः परममृतं निर्मितवतः।

तव ब्रह्मन् किं वागपि सुरगुरोर्विस्मयपदम्॥

मम त्वेतां वाणीं गुणकथनपुण्येनभवतः।

पुनामीत्यर्थेऽस्मिन् पुरमथन बुद्धिर्व्यवसिता॥ ३॥

भावार्थ: हे वेद और भाषा के सृजक! आपने अमृतमय वेदोंकी रचना की है। इसलिए जब देवों के गुरु, बृहस्पति आपकी स्तुति करते है तो आपको कोई आश्चर्य नहीं होता। मै भी अपनी मति अनुसार आपके गुणानुवाद करने का प्रयास कर रहा हूँ। मैं मानता हूँ कि इससे आपको कोई आश्चर्य नहीं होगा, मगर मेरी वाणी इससे अधिक पवित्र और लाभान्वित अवश्य होगी।

तवैश्वर्यं यत्तज्जगदुदयरक्षाप्रलयकृत्।

त्रयीवस्तु व्यस्तं तिसृषु गुणभिन्नासु तनुषु॥

अभव्यानामस्मिन् वरद रमणीयामरमणीं।

विहन्तुं व्याक्रोशीं विदधत इहैके जडधियः॥ ४॥

भावार्थ: आप इस सृष्टि के सृजनहार है, पालनहार है और विसर्जनकार है। इस प्रकार आपके तीन स्वरूप है – ब्रह्मा, विष्णु और महेश तथा आप में तीन गुण है – सत्व, रज और तम। वेदों में इनके बारे में वर्णन किया गया है फिर भी अज्ञानी लोग आपके बारे में उटपटांग बातें करते रहते है। ऐसा करने से भले उन्हें संतुष्टि मिलती हो, किन्तु यथार्थ से वो मुँह नहीं मोड़ सकते।

किमीहः किंकायः स खलु किमुपायस्त्रिभुवनं।

किमाधारो धाता सृजति किमुपादान इति च॥

अतर्क्यैश्वर्ये त्वय्यनवसर दुःस्थो हतधियः।

कुतर्कोऽयं कांश्चित् मुखरयति मोहाय जगतः॥ ५॥

भावार्थ: मूर्ख लोग अक्सर तर्क करते रहते है कि ये सृष्टि की रचना कैसे हुई, किसकी इच्छा से हुई, किन वस्तुओं से उसे बनाया गया इत्यादि। उनका उद्देश्य लोगों में भ्रांति पैदा करने के अलावा कुछ नहीं है। सच पूछो तो ये सभी प्रश्नों के उत्तर आपकी दिव्य शक्ति से जुड़े है और मेरी सीमित बुद्धि से उसे व्यक्त करना असंभव है।

अजन्मानो लोकाः किमवयववन्तोऽपि जगतां।

अधिष्ठातारं किं भवविधिरनादत्य भवति॥

अनीशो वा कुर्याद् भुवनजनने कः परिकरो।

यतो मन्दास्त्वां प्रत्यमरवर संशेरत इमे॥ ६॥

भावार्थ: हे प्रभु, आपके बिना ये सब लोक (सप्त लोक – भू: भुव: स्व: मह: जन: तप: सत्य) का निर्माण क्या संभव है? इस जगत का कोई रचयिता न हो, ऐसा क्या संभव है?आपके अलावा इस

सृष्टिका निर्माण भला कौन कर सकता है ?आपके अस्तित्व के बारे केवल मूर्ख लोगों को ही शंका हो सकती है।

त्रयी साङ्ख्यं योगः पशुपतिमतं वैष्णवमिति।

प्रभिन्ने प्रस्थाने परमिदमदः पथ्यमिति च॥

रुचीनां वैचित्र्यादृजुकुटिल नानापथजुषां।

नृणामेको गम्यस्त्वमसि पयसामर्णव इव॥ ७॥

भावार्थ: हे परमपिता!!! आपको पाने के लिए अनगिनत मार्ग है – सांख्य मार्ग, वैष्णव मार्ग, शैव मार्ग, वेद मार्ग आदि। लोग अपनी रुचि के अनुसार कोई एक मार्ग को पसंद करते है। मगर आखिरकार ये सभी मार्ग, जैसे अलग अलग नदियों का पानी बहकर समुद्र में जाकर मिलता है, वैसे ही, आप तक पहुंचते है। सचमुच, किसी भी मार्ग का अनुसरण करने से आपकी प्राप्ति हो सकती है।

महोक्षः खट्वाङ्गं परशुरजिनं भस्म फणिनः।

कपालं चेतीयत्तव वरद तन्त्रोपकरणम्॥

सुरास्तां तामृद्धिं दधति तु भवद्भ्रूप्रणिहितां।

न हि स्वात्मारामं विष यमृ गतृ ष्णाभ्रमयति॥ ८॥

भावार्थ: आपके भृकुटी के इशारे मात्र से सभी देवगण एश्वर्य एवं संपदाओं का भोग करते हैं। पर आपके स्वयं के लिए सिर्फ कुल्हाडी, बैल, व्याघ्रचर्म, शरीर पर भस्म तथा हाथ में खप्पर (खोपड़ी)! इससे ये फलित होता है कि जो आत्मानंद में लीन रहता है वो संसार के भोगपदार्थो में नहीं फँसता।

ध्रुवं कश्चित् सर्वं सकलमपरस्त्वध्रुवमिदं।

परो ध्रौव्याऽध्रौव्ये जगति गदति व्यस्तविषये॥

समस्तेऽप्येतस्मिन्पुरमथन तैर्विस्मित इव।

स्तुवन् जिहेमि त्वां न खलु ननु धृष्टा मुखरता॥ ९॥

भावार्थ: इस संसार के बारे में विभिन्न विचारकों के भिन्न-भिन्न मत हैं। कोई इसे नित्य जानता है तो कोई इसे अनित्य समझता है। लोग जो भी कहें, आपके भक्त तो आपको हमेंशा सत्य मानते है और आपकी भक्ति मे आनंद पाते है। मैं भी उनका समर्थन करता हूँ, चाहे किसी को मेरा ये कहना धृष्टता लगे, मुझे उसकी परवाह नहीं।

तवैश्वर्यं यत्नाद् यदुपरि विरिञ्चिर्हरिरधः।

परिच्छेतुं यातावनिलमनलस्कन्धवपुषः॥

ततो भक्तिश्रद्धा-भरगुरु-गृणद्भ्यांगिरिश यत्।

स्वयं तस्थे ताभ्यां तव किमनुवृत्तिर्न फलति॥ १०॥

भावार्थ: जब ब्रह्मा और विष्णु के बीच विवाद हुआ की दोनों में से कौन महान है, तब आपने उनकी परीक्षा करने के लिए अग्निस्तंभ का रूप लिया। ब्रह्मा और विष्णु – दोनों नें स्तंभ को अलग अलग छोर से नापने की कोशिश की मगर वो सफल न हो सके। आखिरकार अपनी हार मानकर उन्होंने आपकी स्तुति की, जिससे प्रसन्न होकर आपने अपना मूल रूप प्रकट किया। सचमुच, अगर कोई सच्चे दिल से आपकी स्तुति करे और आप प्रकट न हों एसा कभी हो सकता है भला?

अयत्नादापाद्य त्रिभुवनमवैरव्यतिकरं।

दशास्यो यद्बाहूनभृत-रणकण्डू-परवशान्॥

शिरःपद्मश्रेणी-रचितचरणाम्भोरुह-बलेः।

स्थिरायास्त्वद्भक्तेस्त्रिपुरहर विस्फूर्जितमिदम्॥ ११॥

भावार्थ: आपके परम भक्त रावण ने पद्म की जगह अपने नौ-नौ मस्तक आपकी पूजा में समर्पित कर दिये। जब वो अपना दसवाँ मस्तक काटकर अर्पण करने जा रहा था तब आपने प्रकट होकर उसको वरदान दिया। इस वरदान की वजह से ही उसकी भुजाओं में अटूट बल प्रकट हुआ और वो तीनो लोक में

शत्रुओं पर विजय पाने में समर्थ रहा। ये सब आपकी दृढ भक्ति का नतीजा है।

अमुष्य त्वत्सेवा-समधिगतसारं भुजवनं।

बलात् कैलासेऽपि त्वदधिवसतौ विक्रमयतः॥

अलभ्यापातालेऽप्यलसचलितांगुष्ठशिरसि।

प्रतिष्ठा त्वय्यासीद् ध्रुवमुपचितो मुह्यति खलः॥ १२॥

भावार्थ: आपकी परम भक्ति से रावण अतुलित बल का स्वामी बन बैठा मगर इससे उसने क्या करना चाहा ? आपकी पूजा के लिए हर रोज कैलाश जाने का श्रम बचाने के लिए कैलाश को उठाकर लंका में गाढ़ देना चाहा। जब कैलाश उठाने के लिए रावण ने अपनी भूजाओं को फैलाया तब पार्वती भयभीत हो उठीं। उन्हें भयमुक्त करने के लिए आपने सिर्फ अपने पैर का अंगूठा हिलाया तो रावण जाकर पाताल में गिरा और वहाँ भी उसे स्थान नहीं मिला। सचमुच, जब कोई आदमी अनधिकृत बल या संपत्ति का स्वामी बन जाता है तो उसका उपभोग करने में विवेक खो देता है।

यदृद्धिं सुत्राम्णो वरद परमोच्चैरपि सतीं।

अधश्चक्रे बाणः परिजनविधेयत्रिभुवनः॥

न तच्चित्रं तस्मिन् वरिवसितरि त्वच्चरणयोः।

न कस्याप्युन्नत्यै भवति शिरसस्त्वय्यवनतिः॥ १३॥

भावार्थ: आपकी कृपा मात्र से ही बाणासुर दानव इन्द्रादि देवों से भी अधिक ऐश्वर्यशाली बन गया तथा तीनो लोकों पर राज्य किया। हे ईश्वर ! जो मनुष्य आपके चरण में श्रद्धाभक्तिपूर्वक शीश रखता है उसकी उन्नति और समृद्धि निश्चित है।

अकाण्ड-ब्रह्माण्ड-क्षयचकित-देवासुरकृपा-

विधेयस्याऽऽसीद् यस्त्रिनयन विषं संहृतवतः॥

स कल्माषः कण्ठे तव न कुरुते न श्रियमहो।

विकारोऽपि श्लाघ्यो भुवन-भय-भङ्ग-व्यसनिनः॥ १४॥

भावार्थ: जब समुद्रमंथन हुआ तब अन्य मूल्यवान रत्नों के साथ महाभयानक विष निकला, जिससे समग्र सृष्टि का विनाश हो सकता था। आपने बड़ी कृपा करके उस विष का पान किया। विषपान करने से आपके कंठ में नीला चिन्ह हो गया और आप नीलकंठ कहलाये। परंतु हे प्रभु, क्या ये आपको कुरुप बनाता है ? कदापि नहीं, ये तो आपकी शोभा को और बढाता है। जो व्यक्ति औरों के दुःख दूर करता है उसमें अगर कोई विकार भी हो तो वो पूजा पात्र बन जाता है।

असिद्धार्था नैव क्वचिदपि सदेवासुरनरे।

निवर्तन्ते नित्यं जगति जयिनो यस्य विशिखाः॥

स पश्यन्नीश त्वामितरसुरसाधारणमभूत्।

स्मरः स्मर्तव्यात्मा न हि वशिषु पथ्यः परिभवः॥ १५॥

भावार्थ: कामदेव के वार से कभी कोई भी नहीं बच सका चाहे वो मनुष्य हों, देव या दानव हों। पर जब कामदेव ने आपकी शक्ति समझे बिना आप की ओर अपने पुष्प बाण को साधा तो आपने उसे तत्क्षण ही भष्म कर दिया। श्रेष्ठ जनो के अपमान का परिणाम हितकर नहीं होता।

मही पादाघाताद् व्रजति सहसा संशयपदं।

पदं विष्णोर्भ्राम्यद् भुज-परिघ-रुग्ण-ग्रह-गणम्॥

मुहुर्द्यौर्दौस्थ्यं यात्यनिभृत-जटा-ताडित-तटा।

जगद्रक्षायै त्वं नटसि ननु वामैव विभुता॥ १६॥

भावार्थ: जब संसार के कल्याण हेतु आप तांडव करने लगते हैं तब समग्र सृष्टिभय के मारे कांप उठती है, आपके पदप्रहार से पृथ्वी अपना अंत समीप देखती है ग्रह नक्षत्र भयभीत हो उठते हैं। आपकी जटा के स्पर्श मात्र से स्वर्गलोग व्याकुल हो उठता

है और आपकी भुजाओं के बल से वैंकुंठ में खलबली मच जाती है। हे महादेव! आश्चर्य ही है कि आपका बल अतिशय कष्टप्रद है।

वियद्व्यापी तारा-गण-गुणित-फेनोद्गम-रुचिः।

प्रवाहो वारां यः पृषतलघुदृष्टः शिरसि ते॥

जगद्द्वीपाकारं जलधिवलयं तेन कृतमिति।

अनेनैवोन्नेयं धृतमहिम दिव्यं तव वपुः॥ १७॥

भावार्थ: गंगा नदी जब मंदाकिनी के नाम से स्वर्ग से उतरती है तब नभोमंडल में चमकते हुए सितारों की वजह से उसका प्रवाह अत्यंत आकर्षक दिखाई देता है, मगर आपके शिर पर सिमट जाने के बाद तो वह एक बिंदु समान दिखाई पडती है। बाद में जब गंगाजी आपकी जटा से निकलती है और भूमि पर बहने लगती है तब बड़े बड़े द्वीपों का निर्माण करती है। ये आपके दिव्य और महिमावान स्वरूप का ही परिचायक है।

रथः क्षोणी यन्ता शतधृतिरगेन्द्रो धनुरथो।

रथाङ्गे चन्द्रार्कौ रथ-चरण-पाणिः शर इति॥

दिधक्षोस्ते कोऽयं त्रिपुरतृणमाडम्बरविधिः।

विधेयैः क्रीडन्त्यो न खलु परतन्त्राः प्रभुधियः॥ १८॥

भावार्थ: आपने (तारकासुर के पुत्रों द्वारा रचित) तीन नगरों का विध्वंश करने हेतु पृथ्वी को रथ, ब्रह्मा को सारथी, सूर्य चन्द्र को दो पहिये मेरु पर्वत का धनुष बनाया और विष्णुजी का बाण लिया। हे शम्भू ! इस वृहत प्रयोजन की क्या आवश्यकता थी ? आपके लिए तो संसार मात्र का विलय करना अत्यंत ही छोटी बात है। आपको किसी सहायता की क्या आवश्यकता? आपने तो केवल (अपने नियंत्रण में रहीं) शक्तियों के साथ खेल किया था, लीला की थी।

हरिस्ते साहस्रं कमल बलिमाधाय पदयोः।

यदेकोने तस्मिन् निजमुदहरन्नेत्रकमलम्॥

गतो भक्त्युद्रेकः परिणतिमसौ चक्रवपुषः।

त्रयाणां रक्षायै त्रिपुरहर जागर्ति जगताम्॥ १९॥

भावार्थ: जब भगवान विष्णु ने आपकी सहस्र कमलों (एवं सहस्र नामों) द्वारा पूजा प्रारम्भ की तो उन्होंने एक कमल कम पाया। तब भक्ति भाव से विष्णुजी ने अपनी एक आँख को कमल के स्थान पर अर्पित कर दिया। उनकी इसी अदम्य भक्ति ने सुदर्शन चक्र का स्वरूप धारण कर लिया जिसे भगवान विष्णु संसार रक्षार्थ उपयोग करते हैं। हे प्रभु, आप

तीनों लोक (स्वर्ग, पृथ्वी और पाताल) की रक्षा के लिए सदैव जाग्रत रहते हो।

क्रतौ सुप्ते जाग्रत् त्वमसि फलयोगे क्रतुमतां।

क्व कर्म प्रध्वस्तं फलति पुरुषाराधनमृते॥

अतस्त्वां सम्प्रेक्ष्य क्रतुषु फलदान-प्रतिभुवं।

श्रुतौ श्रद्धां बध्वा दृढपरिकरः कर्मसु जनः॥ २०॥

भावार्थ: यज्ञ की समाप्ति होने पर आप यज्ञकर्ता को उसका फल देते हो। आपकी उपासना और श्रद्धा बिना किया गया कोई कर्म फलदायक नही होता। यही वजह है कि वेदों मे श्रद्धा रखके और आपको फलदाता मानकर हर कोई अपने कार्यो का शुभारंभ करते है।

क्रियादक्षो दक्षः क्रतुपतिरधीशस्तनुभृतां।

ऋषीणामार्त्विज्यं शरणद सदस्याः सुर-गणाः॥

क्रतुभ्रंशस्त्वत्तः क्रतुफल-विधान-व्यसनिनः।

ध्रुवं कर्तुं श्रद्धा विधुरमभिचाराय हि मखाः॥ २१॥

भावार्थ: यद्यपि आपने यज्ञ कर्म और फल का विधान बनाया है तद्यपि जो यज्ञ शुद्ध विचारों और कर्मो से प्रेप्रित न हो और

आपकी अवहेलना करने वाला हो उसका परिणाम कदाचित विपरीत और अहितकर ही होता है इसीलिए दक्षप्रजापति के महायज्ञ यज्ञ को जिसमें स्वयं ब्रह्मा तथा अनेकानेक देवगण तथा ऋषि-मुनि सम्मिलित हुए, आपने नष्ट कर दिया क्योंकि उसमें आपका सम्मान नहीं किया गया। सचमुच, भक्ति के बिना किये गये यज्ञ किसी भी यज्ञकर्ता के लिए हानिकारक सिद्ध होते है।

प्रजानाथं नाथ प्रसभमभिकं स्वां दुहितरं।

गतं रोहिद् भूतां रिरमयिषुमृष्यस्यवपुषा॥

धनुष्पाणेर्यातं दिवमपि सपत्राकृतममु।

त्रसन्तं तेऽद्यापि त्यजति न मृगव्याधरभसः॥ २२॥

भावार्थ: एक बार प्रजापिता ब्रह्मा अपनी पुत्री पर ही मोहित हो गए। जब उनकी पुत्री ने हिरनी का स्वरुप धारण कर भागने की कोशिश की तो कामातुर ब्रह्मा भी हिरन भेष में उसका पीछा करने लगे। हे शंकर ! तब आप ने व्याघ्र स्वरूप में धनुष-बाण ले ब्रह्मा को मार भगाया। आपके रौद्र रूप से भयभीत ब्रह्मा आकाश दिशा में अदृश्य अवश्य हुए परन्तु आज भी वह आपसे भयभीत हैं।

स्वलावण्याशंसा धृतधनुषमह्नाय तृणवत्।

पुरः प्लुष्टं दृष्ट्वा पुरमथन पुष्पायुधमपि॥

यदि स्त्रैणं देवी यमनिरत-देहार्ध-घटनात्।

अवैति त्वामद्धा बत वरद मुग्धा युवतयः॥ २३॥

भावार्थ: जब कामदेव ने आपकी तपश्चर्या में बाधा डालनी चाही और आपके मन में पार्वती के प्रति मोह उत्पन्न करने की कोशिश की, तब आपने कामदेव को तृणवत् भस्म कर दिया। अगर तत्पश्चात् भी पार्वती ये समझती है कि आप उन पर मुग्ध है क्योंकि आपके शरीर का आधा हिस्सा उनका है, तो ये उनका भ्रम होगा। सच पूछो तो हर युवती अपनी सुंदरता पे मुग्ध होती है।

श्मशानेष्वाक्रीडा स्मरहर पिशाचाः सहचराः।

चिता-भस्मालेपः स्रगपि नृकरोटी-परिकरः॥

अमङ्गल्यं शीलं तव भवतु नामैवमखिलं।

तथापि स्मर्तृणांवरद परमं मङ्गलमसि॥ २४॥

भावार्थ: आप श्मशान में रमण करते हैं, भूत - प्रेत आपके मित्र हैं, आप चिता भष्म का लेप करते हैं तथा मुंडमाल धारण करते हैं। ये सारे गुण ही अशुभ एवं भयावह जान पड़ते हैं। तब भी हे

श्मशान निवासी ! उन भक्तों जो आपका स्मरण करते है, आप सदैव शुभ और मंगल करते है।

मनः प्रत्यक् चित्ते सविधमविधायात्त-मरुतः।

प्रहृष्यद्रोमाणः प्रमद-सलिलोत्सङ्गति-दृशः॥

यदालोक्याह्लादं हद इव निमज्यामृतमये।

दधत्यन्तस्तत्त्वं किमपि यमिनस्तत् किल भवान्॥ २५॥

भावार्थ: आपको पाने के लिए योगी क्या क्या नहीं करते ? बस्ती से दूर, एकांत में आसन जमाकर, शास्त्रों में बताई गई विधि के अनुसार प्राण की गति को नियंत्रित करने की कठिन साधना करते है और उसमें सफल होने पर हर्षाश्रु बहाते है। सचमुच, सभी प्रकार की साधना का अंतिम लक्ष्य आपको पाना ही है।

त्वमर्कस्त्वं सोमस्त्वमसि पवनस्त्वं हुतवहः।

त्वमापस्त्वं व्योम त्वमु धरणिरात्मा त्वमिति च॥

परिच्छिन्नामेवं त्वयि परिणता बिभ्रति गिरं।

न विद्मस्तत्तत्त्वं वयमिह तु यत् त्वं न भवसि॥ २६॥

भावार्थ: आप ही सूर्य, चन्द्र, धरती, आकाश, अग्नि, जल एवं वायु हैं। आप ही आत्मा भी हैं। हे देव!! मुझे ऐसा कुछ भी ज्ञात नहीं जो आप न हों।

त्रयीं तिस्रो वृत्तीस्त्रिभुवनमथो त्रीनपि सुरान्।

अकाराद्यैर्वर्णैस्त्रिभिरभिदधत्तीर्णविकृति॥

तुरीयं ते धाम ध्वनिभिरवरुन्धानमणुभिः।

समस्त-व्यस्तं त्वां शरणद गृणात्योमिति पदम्॥ २७॥

भावार्थ: (हे सर्वेश्वर! ॐ शब्द अ, ऊ, म से बना है। ये तीन शब्द तीन लोक स्वर्ग, पृथ्वी और पाताल; तीन देव – ब्रह्मा, विष्णु और महेश तथा तीन अवस्था – स्वप्न, जागृति और सुषुप्ति के द्योतक है। लेकिन जब पूरी तरह से ॐ कार का ध्वनि निकलता है तो ये आपके तुरीय पद (तीनों से पर) को अभिव्यक्त करता है।

भवः शर्वो रुद्रः पशुपतिरथोग्रः सहमहान्।

तथा भीमेशानाविति यदभिधानाष्टकमिदम्॥

अमुष्मिन् प्रत्येकं प्रविचरति देव श्रुतिरपि।

प्रियायास्मै धाम्ने प्रणिहित-नमस्योऽस्मि भवते॥ २८॥

भावार्थ: वेद एवं देवगण आपकी इन आठ नामों से वंदना करते हैं भव, सर्व, रूद्र, पशुपति, उग्र, महादेव, भीम, एवं इशान। हे शम्भू! मैं भी आपकी इन नामों की भावपूर्वक स्तुति करता हूँ।

नमो नेदिष्ठाय प्रियदव दविष्ठाय च नमः।

नमः क्षोदिष्ठाय स्मरहर महिष्ठाय च नमः॥

नमो वर्षिष्ठाय त्रिनयन यविष्ठाय च नमः।

नमः सर्वस्मै ते तदिदमतिसर्वाय च नमः॥ २९॥

भावार्थ: आप सब से दूर हैं फिर भी सब के पास है। हे कामदेव को भस्म करनेवाले प्रभु ! आप अति सूक्ष्म है फिर भी विराट है। हे तीन नेत्रोंवाले प्रभु! आप वृद्ध है और युवा भी है। आप सब में है फिर भी सब से पर है। आपको मेरा प्रणाम है।

बहुल-रजसे विश्वोत्पत्तौ, भवाय नमो नमः।

प्रबल-तमसे तत् संहारे, हराय नमो नमः॥

जन-सुखकृते सत्त्वोद्रिक्तौ, मृडाय नमो नमः।

प्रमहसि पदे निस्त्रैगुण्ये, शिवाय नमो नमः॥ ३०॥

भावार्थ: मैं आपको रजोगुण से युक्त सृजनकर्ता जान कर आपके ब्रह्मा स्वरूप को नमन करता हूँ। तमोगुण को धारण

करके आप जगत का संहार करते हो, आपके उस रुद्र स्वरूप को मैं नमन करता हूँ। सत्वगुण धारण करके आप लोगों के सुख के लिए कार्य करते हो, आपके उस विष्णु स्वरूप को नमस्कार है। इन तीनों गुणों से पर आपका त्रिगुणातीत स्वरूप है, आपके उस शिव स्वरूप को मेरा नमस्कार है।

कृश-परिणति-चेतः क्लेशवश्यं क्व चेदं।

क्व च तव गुण-सीमोल्लङ्घिनी शश्वदृद्धिः॥

इति चकितममन्दीकृत्य मां भक्तिराधाद्।

वरद चरणयोस्ते वाक्य-पुष्पोपहारम्॥ ३१॥

भावार्थ: मेरा मन शोक, मोह और दुःख से संतप्त तथा क्लेश से भरा पड़ा है। मैं दुविधा में हूँ कि ऐसे भ्रमित मन से मैं आपके दिव्य और अपरंपार महिमा का गान कैसे कर पाउँगा ? फिर भी आपके प्रति मेरे मन में जो भाव और भक्ति है उसे अभिव्यक्त किये बिना मैं नहीं रह सकता। अतः ये स्तुति की माला आपके चरणों में अर्पित करता हूँ।

असित-गिरि-समं स्यात् कज्जलं सिन्धु-पात्रे।

सुर-तरुवर-शाखा लेखनी पत्रमुर्वी॥

लिखति यदि गृहीत्वा शारदा सर्वकालं।

तदपि तव गुणानामीश पारं न याति॥ ३२॥

भावार्थ: यदि समुद्र को दवात बनाया जाय, उसमें काले पर्वत की स्याही डाली जाय, कल्पवृ क्षके पेड की शाखा को लेखनी बनाकर और पृ थ्वी को कागज़ बनाकर स्वयं ज्ञान स्वरूपा माँ सरस्वती दिनरात आपके गुणों का वर्णन करें तो भी आप के गुणों की पूर्णतया व्याख्या करना संभव नहीं है।

असुर-सुर-मुनीन्द्रै रर्चितस्येन्दुमौलेः।

ग्रथित-गुणमहिम्नो निर्गुणस्येश्वरस्य॥

सकल-गण-वरिष्ठः पुष्पदन्ताभिधानः।

रुचिरमलघुवृत्तैः स्तोत्रमेतच्चकार॥ ३३॥

भावार्थ: आप सुर, असुर और मुनियों के पूजनीय हैं, आपने मस्तक पर चंद्र को धारण किया है और आप सभी गुणों से परे है। आपकी इसी दिव्य महिमा से प्रभावित होकर मैं, पुष्पंदत गंधर्व, आपकी स्तुति करता हूँ।

अहरहरनवद्यं धूर्जटेः स्तोत्रमेतत्।

पठति परमभक्त्या शुद्ध-चित्तः पुमान् यः॥

स भवति शिवलोके रुद्रतुल्यस्तथाऽत्र।

प्रचुरतर-धनायुः पुत्रवान् कीर्तिमांश्च॥ ३४॥

भावार्थ: पवित्र और भक्तिभावपूर्ण हृदय से जो मनुष्य इस स्तोत्र का नित्य पाठ करेगा, तो वो पृथ्वीलोक में अपनी इच्छा के अनुसार धन, पुत्र, आयुष्य और कीर्ति को प्राप्त करेगा। इतना ही नहीं, देहत्याग के पश्चात् वो शिवलोक में गति पाकर शिवतुल्य शांति का अनुभव करेगा। शिवमहिम्न स्तोत्र के पठन से उसकी सभी लौकिक व पारलौकिक कामनाएँ पूर्ण होंगी।

महेशान्नापरो देवो महिम्नो नापरा स्तुतिः।

अघोरान्नापरो मन्त्रो नास्ति तत्त्वं गुरोः परम्॥ ३५॥

भावार्थ: शिव से श्रेष्ठ कोइ देव नहीं, शिवमहिम्न स्तोत्र से श्रेष्ठ कोइ स्तोत्र नहीं है, भगवान शंकर के नाम से अधिक महिमावान कोई मंत्र नहीं है और ना ही गुरु से बढकर कोई पूजनीय तत्व।

दीक्षा दानं तपस्तीर्थं ज्ञानं यागादिकाः क्रियाः।

महिम्नस्तव पाठस्य कलां नार्हन्ति षोडशीम्॥ ३६॥

भावार्थ: शिवनहिम्न स्तोत्र का पाठ करने से जो फल मिलता है वो दीक्षा या दान देने से, तप करने से, तीर्थाटन करने से, शास्त्रों का ज्ञान पाने से तथा यज्ञ करने से कहीं अधिक है।

कुसुमदशन-नामा सर्व-गन्धर्व-राजः।

शशिधरवर-मौलेर्देवदेवस्यदासः॥

स खलु निज-महिम्नो भ्रष्ट एवास्य रोषात्।

स्तवनमिदमकार्षीद् दिव्य-दिव्यं महिम्नः॥ ३७॥

भावार्थ: पुष्पदन्त गंधर्वों का राजा, चन्द्रमौलेश्वर शिव जी का परम भक्त था। मगर भगवान शिव के क्रोध की वजह से वह अपने स्थान से च्युत हुआ। महादेव को प्रसन्न करने के लिए उसने ये महिम्नस्तोत्र की रचना की है।

सुरगुरुमभिपूज्यस्वर्ग-मोक्षैक-हेतुं।

पठति यदि मनुष्यः प्राञ्जलिर्नान्य-चेताः॥

व्रजति शिव-समीपं किन्नरैः स्तूयमानः।

स्तवनमिदममोघं पुष्पदन्तप्रणीतम्॥ ३८॥

भावार्थ: जो मनुष्य अपने दोनों हाथों को जोड़कर, भक्तिभावपूर्ण, इस स्तोत्र का पठन करेगा, तो वह स्वर्ग-मुक्ति

देनेवाले, देवता और मुनिओं के पूज्य तथा किन्नरों के प्रिय ऐसे भगवान शंकर के पास अवश्य जायेगा। पुष्पदंत द्वारा रचित यह स्तोत्र अमोघ और निश्चित फल देनेवाला है।

आसमाप्तमिदं स्तोत्रं पुण्यं गन्धर्व-भाषितम्।

अनौपम्यं मनोहारि सर्वमीश्वरवर्णनम्॥ ३९॥

भावार्थ: पुष्पदंत गन्धर्व द्वारा रचित, भगवान शिव के गुणानुवाद से भरा, मनमोहक, अनुपम और पुण्यप्रदायक स्तोत्र यहाँ पर संपूर्ण होता है।

इत्येषा वाङ्मयी पूजा श्रीमच्छङ्कर-पादयोः।

अर्पिता तेन देवेशः प्रीयतां मे सदाशिवः॥ ४०॥

भावार्थ: वाणी के माध्यम से की गई मेरी यह पूजा आपके चरणकमलों में सादर अर्पित है। कृपया इसका स्वीकार करें और आपकी प्रसन्नता मुझ पर बनाये रखें।

तव तत्त्वं न जानामि कीदृशोऽसि महेश्वर।

यादृशोऽसि महादेव तादृशाय नमो नमः॥ ४१॥

भावार्थ: हे शिव!! मैं आपके वास्तविक स्वरुप् को नहीं जानता। लेकिन आप जैसे भी है, जो भी है, मैं आपको प्रणाम करता हूँ।

एककालं द्विकालं वा त्रिकालं यः पठेन्नरः।

सर्वपाप-विनिर्मुक्तः शिव लोके महीयते॥ ४२॥

भावार्थ: जो इस स्तोत्र का दिन में एक, दो या तीन बार पाठ करता है वह सर्व प्रकार के पाप से मुक्त हो जाता है तथा शिव लोक को प्राप्त करता है।

श्री पुष्पदन्त-मुख-पङ्कज-निर्गतेन।

स्तोत्रेण किल्बिष-हरेण हर-प्रियेण॥

कण्ठस्थितेन पठितेन समाहितेन।

सुप्रीणितो भवति भूतपतिर्महेशः॥ ४३॥

भावार्थ: पुष्पदंत के कमलरूपी मुख से उदित, पाप का नाश करनेवाली, भगवान शंकर की अतिप्रिय यह स्तुति का जो पठन करेगा, गान करेगा या उसे सिर्फ अपने स्थान में रखेगा, तो भोलेनाथ शिव उन पर अवश्य प्रसन्न होंगे।

॥ इति श्री पुष्पदन्त विरचितं शिवमहिम्नः स्तोत्रं सम्पूर्णम्॥